यीशु की शिक्षाएँ I

यीशु की शिक्षाएं I: पाठ्यक्रम

टिप्पणियाँ —

कक्षा #१:

I. पाठ्यक्रम का परिचय।
II. परमेश्वर की महानताः
   क. प्रभुता।

कक्षा #२:

II. परमेश्वर की महानताः (आगे..)
   ख. त्रिएकता।

कक्षा #३:

II. परमेश्वर की महानताः (आगे..)
   ग. अलौकिकता।
III. परमेश्वर के गुणः
   क. परमेश्वर का प्रेम।
   ख. परमेश्वर की पवित्रता

कक्षा #४:

III. परमेश्वर के गुणः (आगे...)
   ग. परमेश्वर का अनुग्रह।
IV. परमेश्वर की सच्चाईः
   क. बाइबल।
   ख. व्यवस्था।
   ग. भविष्यद्वाणी।
   घ. आत्मिक सिद्धान्त।

कक्षा #५:

IV. परमेश्वर की सच्चाई (आगे...)
   ङ. प्रकाशमान होना।
   परीक्षा।

यीशु की शिक्षाएँ I

टिप्पणियाँ —

यीशु की शिक्षाएं I: परीक्षा
२० बिन्दुओं वाले सम्भावित प्रश्न

१) एक विषय लेकर उसे चार खण्डों में और उसके आधार पर मसीह की ईश्वरीयता के बचाव में विचारों को व्यक्त करें (पृष्ठ १४-१८)।

२) प्रमाणित करने वाले सात बिन्दुओं (किसी हवाले की जरूरत नहीं है) को सुनने और व्याख्या करने के द्वारा मसीह की ईश्वरी का बचाव करें (पृष्ठ १४-१८)।

३) चंगाई के उद्देश्य को समझाने के लिए चार बिन्दुओं की एक श्रृंखला का निर्माण करें (पेज २२)।

४) न्याय किन बातों का परिणाम है? किसी हवाले की ज़रूरत नहीं है (पृष्ठ २८)।

५) बाइबल में विविधता के अन्दर एक को दिखाने के लिए मत्ती और लूका रचित सुसमाचार में तुलना करें (पृष्ठ ३२)।

६) चार आत्मिक सिद्धान्त लिखें जो आपसे कहते हैं कि "जो आप बोते हैं वही काटते हैं" (पृष्ठ ३६)।

लगभग १० बिन्दुओं वाले सम्भावित प्रश्न

१) सामान्तर सुसमाचारों का नाम लिखें (पृष्ठ ५)।

२) दो ऐसे पद बताएं जो असम्भव परिस्थियों में परमेश्वर की श्रेष्ठता को प्रगट करते हों (पृष्ठ ६)।

३) उदाहरण के लिए एक ऐसा वचन लिखें जो प्रकाशनों पर परमेश्वर की प्रभुता को दर्शाता हो।

४) उदाहरण के लिए एक ऐसा वचन लिखें जो चंगाई पर परमेश्वर के अधिकार को दिखाता हो (पृष्ठ ८)।

५) उदाहरण के लिए एक ऐसा वचन लिखें जो परमेश्वर द्वारा "अनुमति दी गयी इच्छा" को दर्शाता हो (पृष्ठ ९)।

६) एक ऐसे तरीके का उल्लेख करें जिसमें त्रीएकता को विरोधाभारी रूप में प्रस्तुत किया गया हो। (पृष्ठ ११-१३)।

७) उदाहरण के लिए दो ऐसे वचनों को लिखें जो पवित्र आत्मा के महत्व को दर्शाता हो (पृष्ठ १८)

८) उदाहरण के लिए एक ऐसा वचन लिखें जो दिखाता हो कि परमेश्वर अपने चुने हुओं के साथ पक्षपात नहीं करता (पृष्ठ २६)।

९) न्याय पाने के लिए एक तरीके का नाम लिखें (पृष्ठ २७)।

१०) एक ऐसा वचन बताएं जिसमें विभिन्न स्तर के न्याय को दर्शाया गया हो (पृष्ठ २८)।

११) दो ऐसे वचन बताएं जिनमें परमेश्वर का अनुग्रह दर्शाया गया हो (पृष्ठ ३०)।

१२) आप एक झूठे भविष्यद्वक्ता को कैसे पहचान सकते हैं (पृष्ठ ३५)?

यीशु की शिक्षाएँ I

टिप्पणियाँ –

I. पाठ्यक्रम का परिचय।

यीशु की शिक्षाओं की श्रृंखला का पाठ्यक्रमः

यह पाठ्यक्रम सुसमाचार में यीशु की शिक्षाओं की श्रृंखला के तीन भागों से पहला भाग है जिसे क्रमबद्ध ईश्वरीय मिमांसा के रूप में तैयार किया गया है। यह श्रृंखला तीन "क्षेत्रों" पर आधारित है। अध्ययन के निम्नलिखित "क्षेत्रों" के हिसाब से इस श्रृंखला को तीन भागों में बांट दिया गया हैः

१) परमेश्वर:
(यीशु की शिक्षाएं I, पहले यह शीर्षक सुसमाचारों के सिद्धान्त भाग I हुआ करता था)।

२) संसार:
(यीशु की शिक्षाएं II, पहले यह शीर्षक सुसमाचारों के सिद्धान्त भाग II हुआ करता था)।

३) मसीहियत:
(यीशु की शिक्षाएं III, पहले यह शीर्षक सुसमाचारों के सिद्धान्त भाग III हुआ करता था)।

पाठ्यक्रम की सामग्री "सिद्धान्तों" से मिलकर बनी है (अर्थात उन विचारों से मिलकर जो युगों से सत्य हैं) उन्हें एक के बाद एक "श्रृंखला" में व्यवस्थित किया गया हैः

- सिद्धान्तों की हर श्रृंखला एक "शीर्षक" का निर्माण करती है।
- शीर्षकों "विषयों" में व्यवस्थित किया गया है।
- विषयों को "श्रेणियों" में व्यवस्थित किया गया है
- श्रेणियों को तीन प्रमुख "क्षेत्रों" का निर्माण करने के लिए व्यवस्थित किया गया है।

हालांकि इन पाठ्यक्रमों को सुसमाचार पर संकेन्द्रित किया गया है, लेकिन बहुत सी श्रेणियां सीमित नहीं हैं। उदाहरण के लिए "श्रेष्ठता" को सम्पूर्ण पुराने व नये नियम में देखा जा सकता है। लेकिन, हम लोग केवल नये नियम की उन बातों को देखेंगे जिन्हें सुसमाचार कहा जाता है।

ध्यान रखें कि इसे केवल नये नियम के सुसमाचार में यीशु की शिक्षाओं का सर्वेक्षण करने के लिए तैयार किया गया है। हर एक शीर्षक अपने आप में इतने गहन अध्ययन को निहित किये हुए है कि उसे इस पाठ्यक्रम का अलग विषय बनाया जा सकता है। हम आपको प्रोत्साहित करते हैं कि आप इन संसाधनों को अपनी शिक्षा देने वाली सेवकाई के लिए इस्तेमाल करें।

यीशु की शिक्षाएँ I

टिप्पणियाँ –

शिक्षा देने के सुझावः

रूपरेखा का क्रम

रूपरेखा का क्रम बहुत अधिक महत्वपूर्ण है। हर एक बिन्दु पिछले बिन्दु के ऊपर ही निर्मित होता है। इसलिए, शिक्षक के लिए एक मुख्य कार्य ऐसे तरीके को विकसित करना है जिससे एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु, शीर्षक से दूसरे शीर्षक और विषय से दूसरे विषय और एक श्रेणी से दूरी श्रेणी में जाया जा सके। अभियान के माहौल को बनाने की योग्यता बहुत ज़रूरी है। विषय वस्तु अर्थात सामग्री ही कई बार हमारे भीतर "आन्दोलन" की भावना को उज़ागर कर देती है। लेकिन शिक्षक का फिर भी उसमें स्थिति परिवर्तनकारी वाक्यों और विचारों को उभारना पड़ता है।

प्रत्येक बिन्दु को प्रस्तुत करना

हर एक बिन्दु एक बाइबल के वचन के साथ प्रारम्भ होता। उसके बाद उसके बारे में सक्षिप्त वर्णन करते हुए यह बताया जाता है कि यह शिक्षा बहाव में किस प्रकार मिलने जा रही है। कई बार एक सिद्धान्त को दोहराया जाता है क्योंकि वह दो या अधिक विषयों को प्रभावित करता है। प्रत्येक वचन को कक्षा के अन्दर ज़ोर से पढ़ा जाना चाहिए। शिक्षक दिये गए उन टिप्पणियों का इस्तेमाल कर सकते हैं जिन्हें विषय की व्याख्या करने तथा यह दिखाने के लिए उपलब्ध कराया गया कि वह किस तरह से पिछली शिक्षा या शिक्षाओं के साथ मेल खाता है।

कक्षा में चर्चा

इस पाठ्यक्रम में सामग्री पर या पाठ्यक्रम से जुड़े किसी भी प्रश्न पर चर्चा करने के लिए कोई विशेष "चर्चा को बिन्दु" को आवंटित नहीं किया गया है। विषय या मुद्दे इतने अधिक हैं कि उन पर चर्चा किया जाना सम्भव नहीं है। आप प्रस्तुतिकरण के समय में उठने वाले प्रश्नों और टिप्पणियों का स्वागत कर सकते हैं।

पाठ्यक्रम की श्रृंखला

पाठ्यक्रम की श्रृंखला में से अभी हमारे सामने तीन पाठ्यक्रम हैं और अगर सम्भव हो तो उन्हें एक के बाद एक सिरे से पढ़ाया जाना चाहिए। यदि एक पाठ्यक्रम की सामग्री को खत्म करने का पर्याप्त समय न मिले, तो शिक्षक श्रृंखला के दूसरे पाठ्यक्रम में उसी जगह से शिक्षा को प्रारम्भ कर सकता है जहां पर उसने पहले पाठ्यक्रम में छोड़ा था। यदि किसी पाठ्यक्रम को समाप्त करने के बाद समय बच जाता है, तब शिक्षक अगले पाठ्यक्रम की सामग्री का इस्तेमाल करते हुए आगे बढ़ सकता है।

यीशु की शिक्षाएँ I

टिप्पणियाँ –

क. सुसमाचार की प्रकृति।

१. सुसमाचारों का महत्व स्वाभाविक है। उनमें यीशु की बातें, शिक्षाएं और यीशु के कामों को निहित किया गया है। उसमें यीशु मसीह के जीवन और उसकी सेवकाई का सार छिपा है।

२. सुसमाचार चार हैं। सारे सुसमाचार समान ही हैं, लेकिन उनमें थोड़ी बहुत भिन्नता पायी जाती है।

क. मत्ती, मरकुस और लूका रचित सुसमाचार विशेष तौर पर एक दूसरे के समान है। इसीलिए उन्हें सिनॉप्टिक ("synoptic") सुसमाचार (अर्थात एक जैसे सुसमाचार) और प्रायः इनके हवाले आपस में जोड़कर दिये जाते हैं।

ख. यूहन्ना रचित सुसमाचार में यद्यपि बाकि के तीन सुसमाचारों के समान की मूलतः विषयवस्तु है लेकिन बहुत कम उनके समान है।

३. सुसमाचारों में हम बाइबल की अति महत्वपूर्ण शिक्षाओं को पा सकते हैं। सुसमाचारों में लिखित बातों से जो ईश्वर सम्बन्धी शिक्षाएं हमें प्राप्त होती है वे मसीहियों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं।

ख. तीन पाठ्यक्रमों की विषयवस्तु।

१. यह पाठयक्रम तीन श्रेणियों में बांटा गया है जो मिलकर एक विषय अर्थात "परमेश्वर" का अध्ययन करती है।

२. वे तीन श्रेणियां निम्नलिखित हैंः

क. परमेश्वर की महानता।

ख. परमेश्वर की विशेषताएं।

ग. परमेश्वर की सच्चाई।

टिप्पणियाँ —

II. परमेश्वर की महानता।

क. विषय #१ संप्रभुता। (भले कामों के लिए परमेश्वर की अतुल्य शक्ति)।

१. विषय #१ परमेश्वर की प्रभुता।

क. परमेश्वर के प्रभुत्व का विस्तार।

१) लूका १२:७- परमेश्वर पूरी तरह से संप्रभु हैं। यहां तक कि हमारे सिर के एक एक बाल गिने हुए हैं और वह उनकी गिनती जानते हैं।

२) यूहन्ना ३:२७- मनुष्य पूरी तरह से परमेश्वर के प्रभुत्व पर निर्भर है। अंत में, सेवकाई में सफलता पूरी तरह से परमेश्वर पर निर्भर होती है क्योंकि यदि मनुष्य को पहले दिया न जाए (जो कि परमेश्वर की ज़िम्मेदारी है) मनुष्य कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता (जो कि मनुष्य की ज़िम्मेदारी है)।

३) लूका २२:३१,३२- परमेश्वर के लोगों के खिलाफ कुछ भी करने के लिए शैतान को परमेश्वर से अनुमति लेने की आवश्यकता पड़ती है।

४) लूका १६:१५- परमेश्वर के प्रभुत्व की परिपूर्णता इस तथ्य में देखी जा सकती है कि कोई उसे चकमा या धोखा नहीं दे सकता। वह हृदय में छिपे विचारों को जानते हैं।

ख. परमेश्वर के प्रभुत्व के क्षेत्र।

१) परमेश्वर असम्भवताओं से श्रेष्ठ है।

क) मरकुस ९:२३ - कोई ऐसा काम नहीं है जिसे यीशु अपने चरित्र की हद में रहकर नहीं कर सकते। विश्वास के द्वारा सारे काम हो सकते हैं।

ख) मत्ती १९:२६ - परमेश्वर के लिए सबकुछ सम्भव है। मनुष्यों से उद्धार नहीं हो सकता है, लेकिन परमेश्वर से हो सकता है।

२) परमेश्वर की उद्धार पर संप्रभुता है।

क) यूहन्ना १:१३ - उद्धार के क्षेत्र में परमेश्वर की संप्रभुता को स्पष्ट तौर पर इस पद में देखा जा सकता है। मनुष्य परमेश्वर की इच्छा के अनुसार से नया जन्म प्राप्त करता है।

ख) मरकुस १०:२७ - यदि हम मनुष्य और उसकी स्वतन्त्र इच्छा पर ही निर्भर हैं तब उद्धार असम्भव है। यह केवल परमेश्वर के द्वारा ही सम्भव है, इसलिए उसके मूल स्रोत को परमेश्वर में ढूंढें।

टिप्पणियाँ –

ग) यूहन्ना ६:४४- परमेश्वर हम भली वस्तु के मूल स्रोत हैं। वह उद्धार के स्रोत हैं। परमेश्वर ही हैं जो मनुष्य को अपनी ओर खींचते हैं। मनुष्य अपनी योग्यता से परमेश्वर के पास नहीं आता है।

घ) यूहन्ना ६:४४,६५,६६- किसी ने ऐसा कहा है, "परमेश्वर का प्रभुत्व, मनुष्य की स्वतन्त्र इच्छा को इतनी शक्तिशाली ढंग से प्रभावित करता कि, जो कुछ वह स्वीकार या अस्वीकार करता है वह वास्तव में वहीं होता है जो परमेश्वर ने पहले से उसके लिए ठहरा दिया होता है। मनुष्य के लिए यह रहस्य अपनी पूरी समझ से समझना बहुत कठिन है।

(१) यीशु, लोगों के कुड़कुड़ाने की वजह से लोगों को यह बताने का प्रयास कर रहे थे कि आवश्यक यह है कि परमेश्वर लोगों को अपने पास खीचें।

(२) वे इसलिए कुड़कुड़ा रहे थे क्योंकि वे यीशु के वचनों उसकी बातों का ग्रहण नहीं कर पाए। उसका कारण यह भी हो सकता है कि यीशु उन्हें समझा रहे थे कि क्यों कुछ लोग वचनों और उसकी शिक्षाओं को ग्रहण नहीं कर पाते हैं।

(३) उन्हें प्रभु की बातें इसलिए समझ में नहीं आ रही थीं क्योंकि पिता उन्हें अपनी ओर नहीं खींच रहे थे।

(४) यह उद्धार पर परमेश्वर की प्रभुता को दर्शाता है और यह निश्चय की धर्मशास्त्र की शिक्षाओं का विवादास्पद तथा कठिन भाग है।

३) परमेश्वर प्रकाशनों पर प्रभुता करते हैं (लूका ९:४५ को देखें)। प्रकाशन का नियन्त्रण परमेश्वर के हाथों में है।

४) परमेश्वर अधिकारों पर प्रभुता करते हैं (देखें यूहन्ना १९:१३)। किसी को किसी पर तब तक कोई अधिकार नहीं मिलता जब तक कि परमेश्वर उसे अधिकार और अनुमति नहीं दे देते।

५) परमेश्वर की सुसमाचार प्रचार पर संप्रभुता है।

क) मरकुस ४:३०-३२ - किसी भी मनुष्य को प्रभावशाली प्रचारक होने के लिए एक महान प्रचारक होने की आवश्यकता नहीं है। महत्वपूर्ण भूमि है, प्रचारक नहीं।

ख) १कुरि.३:७ - परमेश्वर तैयार करते हैं और वह भूमि को तैयार करने में श्रेष्ठ है। परमेश्वर महत्व रखते हैं, मनुष्य उतना महत्वपूर्ण नहीं है।

टिप्पणियाँ —

६) परमेश्वर को चंगाई पर प्रभुता है।

क) लूका ५:१७ - चंगाई परमेश्वर के प्रभुत्व के अधीन है। चंगाई देने के लिए परमेश्वर की सामर्थ्य का उपलब्ध होना ज़रूरी है (इसका अर्थ यह है कि कई बार परमेश्वर की सामर्थ्य उस जगह पर उपस्थित न हो।)

ख) यूहन्ना ९:३ - बीमारी हमेशा पाप या विश्वास की कमी का परिणाम नहीं होता। यह परमेश्वर की प्रभुता से बढ़कर और किसी चीज़ का परिणाम नहीं हो सकता। उस बीमारी का उद्देश्य परमेश्वर की सामर्थ द्वारा चंगाई प्रदान करके परमेश्वर को महिमा देना हो सकता है।

७) प्रतिफल पर परमेश्वर का अधिकार है।

क) मरकुस १०:४० - यहां तक कि स्वर्ग पर मिलने वाला प्रतिफल भी परमेश्वर के द्वारा निर्धारित किया जा चुका है।

ख) परमेश्वर को अपने राज्य में हमें स्थान देने का भी पूरा अधिकार है।

८) परमेश्वर मृत्यु पर भी प्रभुता करते हैं।

ग) मत्ती १०:२९-३१ - परमेश्वर को हमारी मृत्य पर भी अधिकार है। हम प्रभु की इच्छा के बिना मर नहीं सकते हैं।

घ) लूका १२:४-७ - अगर परमेश्वर की ओर से अनुमति न दी जाए तो कोई मनुष्य आपको घात नहीं कर सकता है। वह आपकी मृत्यु पर भी नियन्त्रण रखता है।

ग. परमेश्वर की प्रभुता के प्रति हमारी प्रतिक्रिया।

१) लूका १२:२६,३१ - हमें परमेश्वर के राज्य की खोज करने के द्वारा परमेश्वर की प्रभुता व उनके अधिकार को स्वीकार करना चाहिए।

क) हम उन बातों को लेकर चिन्ता करते हैं जिन पर हमारा बस नहीं चलता।

ख) हमें चिन्ता करने के बजाय, यह विश्वास करना चाहिए कि सारा अधिकार परमेश्वर के हाथों में है।

ग) यह विश्वास हमें उन कामों को करने के लिए स्वतन्त्र करेगा जो हमारे बस में हैं (जिसकी ज़िम्मेदारी हमें सौंपी गयी है)। वह ज़िम्मेदारी, परमेश्वर के राज्य की खोज करना है।

टिप्पणियाँ —

२) मत्ती १०:२९-३१- जब हम समझ जाते हैं कि परमेश्वर को हमारी मृत्यु पर भी अधिकार है, तब हमें मृत्यु का भय और चिन्ता कभी नहीं होगी।

३) लूका १२:४-७ - परमेश्वर की प्रभुता के प्रति हमारी प्रतिक्रिया के परिणाम स्वरूप हम में से मनुष्यों का डर समाप्त हो जाता है।

४) यूहन्ना ७:३० - यदि प्रभु की इच्छा न हो तो हम पर कोई सताव भी नहीं आ सकता। यदि वह सताव परमेश्वर की इच्छा है, तो वह भी हमारे जीवन के लिए सबसे अच्छी चीज़ हैं। इसलिए हमें किसी बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिए (इसके अलावा यूहन्ना ८:२० को भी देखें)। परमेश्वर को सब चीज़ों पर अधिकार है।

५) लूका १२:७-९ - परमेश्वर की प्रभुता को समझने के परिणाम स्वरूप हमारे भीतर साहस उत्पन्न होना चाहिए।

२. विषय #२: परमेश्वर की अनुमोदक इच्छा (धीरज)।

क. मत्ती २३:३७ - लोगों की अनैच्छिकता परमेश्वर की उन इच्छाओं को समझने में बाधा डाल सकते हैं जो उनके मन में लोगों को अपनी ओर खींचते समय थी।

ख. मत्ती १९:८ - बाइबल में हम उन निर्देशों को पा सकते हैं जिन्हें परमेश्वर ने मनुष्यों को दिया था, लेकिन मूल रूप से न तो वे योजना में थे और न ही उसकी इच्छा में। उन्हें मनुष्य के पापों की वजह से **स्वीकृती** या **अनुमति** प्रदान की गयी थी।

३. शीर्षक #३: परमेश्वर की स्वतन्त्र इच्छा।

क. मत्ती २३:३७- लोगों की अनैच्छिकता परमेश्वर की उस योजना को समझने में बाधा बन सकती है, जिसे उसने लोगों को अपने पास खींचते समय बनाया था।

ख. यूहन्ना ६:७०- मनुष्य की स्वतन्त्र इच्छा परमेश्वर के चुने जाने को अस्विकार कर सकती है।

टिप्पणियाँ —

ग. यूहन्ना ६:४४, ६५, ६६ - किसी ने ऐसा कहा, "मनुष्य की स्वतन्त्र इच्छा पर परमेश्वर ने इस तरह से प्रभुता कर रखी है कि मनुष्य जिस भी चीज़ को स्वीकार या अस्वीकार करता है वह पहले से ही परमेश्वर के द्वारा ठहराई गयी होती है।" मनुष्य के लिए अपनी सीमित समझ से यह समझ पाना बहुत कठिन है। मनुष्य की स्वतन्त्र इच्छा अकेले उसे बचा नहीं सकती है। वह अपनी इच्छा से उद्धार को अस्वीकार तो कर सकता है लेकिन अपनी इच्छा से उद्धार प्राप्त नहीं कर सकता है।

१) यह अनुच्छेद हमें यह सिखाते हुए प्रतीत हो रहा है कि मनुष्य का उद्धार केवल तभी हो सकता है परमेश्वर उसे अपनी ओर खींचे, और परमेश्वर किसी को अपने पास खींचते हैं और किसी को नहीं।

२) अतः, परमेश्वर किसी को अस्वीकार नहीं करते। वह बस कुछ लोगों को अपने पास खींचते नहीं हैं।

३) अतः, परमेश्वर अस्वीकार नहीं करते वरन चुनते हैं (यह बात रोमियों ९:१४-१८ से मेल खाती है)।

४) हमें यह भी अच्छी तरह से समझना चाहिए कि मनुष्य स्वयं अपनी स्वतन्त्र इच्छा से परमेश्वर को स्वीकार नहीं करता, लेकिन परमेश्वर किसी को अयोग्य नहीं ठहराते। मनुष्य स्वयं ही अपने आप को अयोग्य ठहराता है। हम कह सकते हैं कि परमेश्वर की अपनी ओर खींचने की शक्ति सभी के लिए उपलब्ध है, लेकिन परमेश्वर कुछ लोगों के उनके अपने कामों की वजह से उन्हें अपने पास नहीं खींचते हैं।

५) मनुष्य अपने आप को परमेश्वर के प्रभाव से अलग रखता है। उसके अपने कार्य उसके हृदय को कठोर बना देते हैं। (यूहन्ना ३:१८; मरकुस ४:११,१२; २ पतरस ३:९ को देखें)।

घ. मरकुस १०:२७- यदि हम केवल मनुष्य और उसकी स्वतन्त्र इच्छा पर ही निर्भर रहते हैं तो उद्धार असम्भव है। वह केवल परमेश्वर के द्वारा ही सम्भव है, इसलिए आप अपने स्रोत को परमेश्वर में ढूंढें।

टिप्पणियाँ —

ङ. यूहन्ना १:१२, १३ - हम अपनी इच्छा से नहीं, वरन परमेश्वर की इच्छा से नया जन्म पाते हैं।

१) हमारी स्वतन्त्र इच्छा रचनात्मक इच्छा नहीं है। यह एक ऐसी इच्छा है जो पहले से सृजी गयी और प्रदान की गयी चीज़ों को स्वीकार या अस्वीकार करती है।

२) मनुष्य की विद्यमान स्वतन्त्र इच्छा और परमेश्वर की प्रभुता के बीच उत्पन्न होने वाले विरोधाभास को हम इस बात में देख सकते हैं कि परमेश्वर उसे ग्रहण करने वालों को उद्धार का अधिकार देते हैं, लेकिन वह परमेश्वर की इच्छा के अनुसार होता है।

च. यूहन्ना १५:१६ - हम परमेश्वर को नहीं चुनते। परमेश्वर हमें चुनते हैं।

ख. विषय #२: त्रीएकता।

१. शीर्षक #१: पवित्र त्रीएकता।

क. यूहन्ना १४:३१ - यीशु इस संसार में देहधारित परमेश्वर के रूप में आए, फिर भी वह पिता के "अधीन" रहे।

१) यह हमें त्रीएकता के सार को बताता है, जो कि सिद्ध सम्बन्ध है।

२) यीशु के साथ हमारा एक होना उस सिद्ध रिश्ते को प्रगट करना चाहिए।

ख. यूहन्ना १७:१०, ११ - दूसरों के साथ हमारा सम्बन्ध त्रीएकता में निहित सदस्यों के बीच सम्बन्ध में समानता को दर्शाता है।

ग. यूहन्ना ५:१९, २१ - पुत्र जिसको चाहता है उसको जीवन प्रदान करता है, लेकिन वह केवल उन्हीं कामों को कर सकता है जिन्हें वह अपने पिता को करते देखता है।

१) एक ही स्थान पर त्रीएकता का विरोधाभास और उसका वर्णन भी देखते हैं।

२) पिता और पुत्र की इच्छा एक ही है, उसमें अन्तर है, लेकिन अलग नहीं है। यह एक विरोधाभास है। यह ही त्रीएकता है।

टिप्पणियाँ —

घ. यूहन्ना १:१ - जो परमेश्वर अर्थात वचन **है** उसके लिए यह भी कहा जा रहा है कि वह परमेश्वर के **साथ** था। इस जगह पर हम त्रीएकता का वर्णन और उन में विराधाभास दोनों को देखते हैं। यह त्रीएकता की परिभाषा भी है।

ङ. यूहन्ना १:१, १४, १८ – वचन परमेश्वर **है**, हम ने उसकी महिमा को देखा है, फिर भी किसी व्यक्ति ने परमेश्वर को नहीं देखा, फिर भी परमेश्वर ने परमेश्वर का वर्णन किया है।

१) यह कहना कि परमेश्वर ने स्वयं प्रगट होकर अपना वर्णन किया, फिर भी उसे किसी ने नहीं देखा अपने आप में एक विरोधाभास है।

२) यह त्रीएकता के अर्थ की अच्छी व्याख्या भी है।

२. शीर्षक #२: विरोधाभास।

क. यूहन्ना १:१२,१३- हमें नया जन्म अपनी इच्छा से नहीं वरन परमेश्वर की इच्छा से नया जन्म प्राप्त किया है।

१) हमारी स्वतन्त्र इच्छा रचनात्मक इच्छा नहीं है। यह एक ऐसी इच्छा है जो पहले से सृजी गयी और प्रदान की गयी चीज़ों को स्वीकार या अस्वीकार करती है।

२) मनुष्य की विद्यमान स्वतन्त्र इच्छा और परमेश्वर की प्रभुता के बीच उत्पन्न होने वाले विराधाभास को हम इस बात में देख सकते हैं कि परमेश्वर उसे ग्रहण करने वालों को उद्धार का अधिकार देते हैं, लेकिन वह परमेश्वर की इच्छा के अनुसार होता है।

ख. यूहन्ना १:१ - जो परमेश्वर अर्थात वचन **है** उसके लिए यह भी कहा जा रहा है कि वह परमेश्वर के **साथ** था। इस जगह पर हम त्रीएकता का वर्णन और उन में विराधाभास दोनों को देखते हैं। यह त्रीएकता की परिभाषा भी है।

ग. यूहन्ना १:१,१४,१८- वचन परमेश्वर **है**, हम ने उसकी महिमा को देखा है, फिर भी किसी व्यक्ति ने परमेश्वर को नहीं देखा, फिर भी परमेश्वर ने परमेश्वर का वर्णन किया है।

१) यह कहना कि परमेश्वर ने स्वयं प्रगट होकर अपना वर्णन किया, फिर भी उन्हें किसी ने नहीं देखा अपने आप में एक विरोधाभास है।

२) यह त्रीएकता के अर्थ की अच्छी व्याख्या भी है।

टिप्पणियाँ —

घ. यूहन्ना ५:१९,२१ - पुत्र जिसको चाहता है उसको जीवन प्रदान करता है, लेकिन वह केवल उन्हीं कामों को कर सकता है जिन्हें वह अपने पिता को करते देखता है।

१) एक ही स्थान पर त्रीएकता का विरोधाभास और उसका वर्णन भी देखते हैं।

२) पिता और पुत्र की इच्छा एक ही है, उसमें अन्तर है,लेकिन अलग नहीं है। यह एक विरोधाभास है। यह ही त्रीएकता है।

३. शीर्षक #३: देहधारण।

क. यूहन्ना १:१४ - नये नियम में यीशु वही है जो पुराने नियम में पवित्र तम्बू था।

१) "डेरा किया" का अर्थ वास्तव में "तम्बू खड़ा किया", इस अर्थ उसने हमारे बीच में अपना निवास बनाया।

२) "महिमा" से जुड़ा पद "शकीना" शब्द हमें तम्बू में परमेश्वर की उपस्थिति को याद दिलाता है।

ख. यूहन्ना ६:३३-३५- यीशु ने इस बात का दावा किया कि वह स्वर्ग से उतरे हैं। यह उनकी ईश्वरीयता और उनके देहधारण करने को दर्शाता है।

ग. यूहन्ना ३:१३ - देहधारण का भेद बिल्कुल नया जन्म लेने के भेद के समान है। देहधारण कहता है कि यीशु स्वर्ग से उतरे थे। और नया जन्म कहता है कि हम ने **स्वर्ग से जन्म पाया** है।

घ. यूहन्ना १:१,१४ - वचन परमेश्वर हैं और वचन देहधारी हुआ। जिसका अर्थ है, परमेश्वर ने देह को धारण किया। यही देहधारण की परिभाषा है।

ङ. यूहन्ना १४:७- देहधारण में प्रमुख बात यह है कि परमेश्वर ने स्वयं अपने आपको मनुष्यों पर प्रगट किया है।

टिप्पणियाँ —

४. शीर्षक #४: यीशु मसीह की आलौकिकता।

क. पुत्र बिना किसी पक्ष की विशेषताओं को खोये बगैर पिता के साथ अपनी हस्ती को बदल सकता है।

१) लूका ८:३९- वचन यीशु और परमेश्वर के बारे में इस से बात करता है मानों वे एक हों। इस अर्थ है कि, यीशु और परमेश्वर के सन्दर्भ में दिये गये हवालों को अदल बदल किया जा सकता है।

२) मरकुस १:१, १४ - एक बार फिर से, यीशु और परमेश्वर को अदल बदल कर दर्शाने वाले वचन हैं।

३) यूहन्ना १२:४४, ४५ - यीशु में विश्वास करना और उनको देखना वैसे ही है जैसे परमेश्वर पर विश्वास करना और उन्हें देखना।

४) यूहन्ना ११:४- परमेश्वर की महिमा किसी और को नहीं दी जा सकती (यशा ४२:८ और ४८:११)। फिर भी यीशु ने कहा कि लाज़र परमेश्वर की महिमा के लिए बीमार था, फिर उन्होंने कहा कि यह स्वयं उनकी महिमा के लिए था।

५) यूहन्ना १४:७-११- जब आप ने यीशु को देख लिया तब आपने पिता को देख लिया।

६) यूहन्ना १७:११- पिता ने यीशु को अपना नाम दिया है।

ख. यीशु द्वारा अपने विषय में किया गया दावा।

१) यूहन्ना ४:२५, २६ - यीशु ने दावा किया कि वह मसीह है।

२) यूहन्ना ६:३३-३५ - यीशु ने दावा किया कि वह स्वर्ग से उतरे हैं।

३) लूका २:७०, ७१ - यीशु ने स्वयं अपनी ईश्वरीयता का दावा किया।

टिप्पणियाँ –

४) यूहन्ना १०:३०,३१ - यीशु ने अपने आपको ईश्वर तब कहा जब उन्होंने कहा कि वह और पिता दोनों एक हैं।

क) ध्यान दें कि इस वाक्य के कारण ही यहूदियों ने उस पर पत्थरवाह करने का प्रयास किया था।

१) क्यों? क्योंकि वह कह रहे थे कि वह एक महान शिक्षक या भविष्यद्वक्ता या एक विशेष हस्ती थे?

२) नहीं! वे उस पर इन कारणों से पत्थराव नहीं करना चाहते थे।

ख) वे उस पर ईश निन्दा के कारण पत्थराव करना चाहते थे। इसलिए, क्योंकि उन्होंने इस बात का दावा किया था कि वह परमेश्वर हैं (यूहन्ना ८:५९ को भी देखें)।

५) यूहन्ना ८:५१,५८,५९ – इस जगह यीशु ने अपनी ईश्वरीयता के दावे को तीन अलग अलग तरीकों से प्रस्तुत किया।

क) पहला, उन्होंने दावा किया कि वह अब्राहम के पैदा होने से पहले वह थे।

ख) दूसरा, उन्होंने परमेश्वर के व्यक्तिगत नाम "मैं हूँ" का इस्तेमाल किया।

ग) तीसरा, उन्होंने दावा किया कि उनके पास लोगों बचाने की शक्ति है। यह शक्ति केवल परमेश्वर के पास ही होती है।

घ) फरीसी लोग इन सारी बातों को भली भाँति जानते थे, और इसीलिए वे उन पर ईश निन्दा के कारण पत्थराव करना चाहते थे।

ङ) यह कहना असम्भव है कि आप बाइबल के वचनों पर तो विश्वास करते हैं लेकिन आप यह विश्वास नहीं करते कि यीशु ने अपने आप के लिए दिव्य शक्ति होने का दावा किया था। फरीसी स्वयं आप पर हँसने लगेंगे।

च) जिन बातों पर यीशु दावा कर रहे थे वे सारी बातें प्रत्यक्ष और प्रगट थी। यह प्रगट था कि यहूदियों ने यीशु को मारने का बहुत बार प्रयास किया और अन्त में उसे मार भी दिया।

टिप्पणियाँ –

ग. यीशु पिता के समान थे।

१) यूहन्ना ५:१८- जब यीशु ने कहा कि परमेश्वर उसके पिता हैं, तब ऐसा समझा गया कि वह अपने आप को पिता की समानता में खड़ा करने का प्रयास कर रहे हैं (मत्ती १४:३३)।

२) यूहन्ना ५:२३ - पुत्र का आदर भी पिता के आदर के **समान** होना चाहिए।

३) यूहन्ना २०:२८ - थोमा ने यीशु को, "परमेश्वर" कहकर सम्बोधित किया। यीशु ने उसे नहीं टोका। क्यों? क्योंकि यीशु परमेश्वर हैं।

४) यूहन्ना १७:२१ - परमेश्वर में होने (परमेश्वर को जानने) का उद्देश्य संसार भर में यह गवाही देना है कि यीशु प्रभु हैं।

घ. यीशु ने परमेश्वर की तरह बातें की।

१) लूका १३:३४ - जब यीशु ने इतिहास से बातें करना तथा यरूशलेम का परमेश्वर होने की इच्छा को बताना शुरू किया, तब वह उनसे परमेश्वर के समान बातें कर रहे थे।

२) यूहन्ना १४:६- मार्ग यीशु के "मार्गों" में से एक नहीं है। यीशु ही मार्ग हैं। केवल परमेश्वर ही इस तरह से बातें कर सकते हैं।

क) यीशु किसी सत्य विचारधाराओं के बारे में बातों नहीं कर रहे थे। यीशु स्वयं सत्य हैं। केवल परमेश्वर ही इस प्रकार से बातें कर सकते हैं।

ख) जीवन यहां पर यीशु का जीवन नहीं है। यीशु ही जीवन है। परमेश्वर को छोड़ और कौन इस प्रकार से बातें कर सकता है?

टिप्पणियाँ –

ङ. यीशु की उपाधियां या उपनाम उसकी ईश्वरीयता को प्रगट करते है।

१) यूहन्ना ५:१८ - यीशु की उपाधि "परमेश्वर का पुत्र", उसे परमेश्वर के तुल्य मानने के लिए इस्तेमाल की गयी।

२) यूहन्ना १९:७ और मत्ती १४:३३ - यहूदियों ने यीशु को इसलिए मारा क्योंकि वे समझ गये थे कि वह अपने आप को परमेश्वर का पुत्र घोषित कर रहा है। यहूदी समझ गये थे कि वह अपने आप को परमेश्वर कह रहा है (देखें यूहन्ना ५:१८)।

३) यूहन्ना ९:३७- चंगाई प्राप्त करने वाले ने पूछा, मनुष्य का पुत्र कौन है? यीशु ने उसे उत्तर दिया कि वह ही मनुष्य का पुत्र है। उस व्यक्ति ने तुरन्त यीशु को दण्डवत किया। कोई भी यहूदी इस बात को जानता है कि दण्डवत केवल परमेश्वर के सामने ही किया जाता है (मत्ती १४:३३; प्रका. २२:८,९; प्रेरितों. १०:२५, २६)। इसका अर्थ यह है कि, वह व्यक्ति स्पष्ट तौर पर "मनुष्य का पुत्र" उपाधि को उसकी ईश्वरीयता के साथ जोड़कर देख रहा था।

च. यीशु का पहले से विद्यमान होना।

१) यूहन्ना १:१,२,१५ - यीशु जन्म लेने से पहले इस धरती पर विद्यमान थे।

२) यूहन्ना ८:५८ - यीशु अब्राहम से पहले विद्यमान थे।

३) यूहन्ना १७:५ - इस संसार के सृजे जाने से पहले ही यीशु परमेश्वर पिता के साथ महिमा को साझा कर रहे थे। यह वास्तव में उसकी ईश्वरीयता को प्रगट करते हैं।

छ. सृष्टि के रचे जाने में यीशु की भूमिका।

१) यूहन्ना १:३,१०- सारी चीजें वचन और ज्योति के द्वारा ही रची गयी थीं।

२) इसका अर्थ है, कि वे यीशु के द्वारा रची गयी थीं।

ज. "मैं हूँ" वाक्य।

१) यूहन्ना ८:५८- यीशु ने परमेश्वर के निजी नाम (मैं हूँ) को अपने लिए इस्तेमाल किया।

२) यूहन्ना १३:१९- एक बार फिर से हम, यीशु को अपनी पहचान के लिए "मैं हूँ" का इस्तेमाल करते हुए देखते हैं।

टिप्पणियाँ —

झ. यीशु की ईश्वरीयता त्रीएकता के द्वारा प्रगट होती है।

१) यूहन्ना १४:३१ - यीशु इस धरती पर मानव शरीर लेकर परमेश्वर के रूप में आए, फिर भी वह पिता के "अधीन" रहे।

क) यह त्रीएकता के सार की ओर संकेत करता है, जो कि एक सिद्ध रिश्ता है।

ख) यीशु के साथ हमारा जुड़ा होना उस सिद्ध रिश्ते को प्रगट करने वाला होना चाहिए। त्रीएकता का उदाहरण हमें प्रेरित करता है।

२) यूहन्ना १४:७- देहधारण को लेकर मानवीय सोच यह कहती है कि परमेश्वर ने स्वयं अपने आपको मनुष्यों पर प्रगट कर दिया है।

ञ. यीशु का अधिकार उसकी ईश्वरीयता को प्रगट करता है।

१) मरकुस २:५-११ - यीशु के पास पापों को क्षमा करने का अधिकार था। यह ऐसा अधिकार था जो केवल परमेश्वर के पास ही हो सकता था।

२) यूहन्ना ८:५१ - यीशु के पास लोगों के उद्धार देने का अधिकार था। यह अधिकार सिर्फ परमेश्वर के पास ही हो सकता है।

३) मत्ती २८:१८- यीशु के पास स्वर्ग और पृथ्वी का सारा अधिकार था। यह यीशु कौन हैं? वह परमेश्वर हैं।

५. शीषर्क #५: पवित्र आत्मा।

क. पवित्र आत्मा का महत्व।

१) यूहन्ना १६:७ - यीशु के इस धरती पर प्रत्यक्ष रूप में होने के समय से तुलना करने पर हमें अभी एक फायदा नज़र आता है कि पवित्र आत्मा यहां ऊतर आया है। जिसके कारण, सारी दुनिया के सभी विश्वासी एक समय पर एक साथ यीशु के साथ हो सकते हैं।

२) मरकुस ३:२९ - पवित्र आत्मा की निन्दा को कभी और कहीं पर भी क्षमा न किये जाने वाले पाप के रूप में गिना गया है।

टिप्पणियाँ —

ख. पवित्र आत्मा का बपतिस्मा।

१) लूका ३:१६ - यीशु ने जो बपतिस्मा लोगों को दिया, उसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को यीशु (पवित्र आत्मा) के समीप आने के लिए सशक्त किया गया है।

२) इसके अलावा उसमें, न्याय, अनुशासन, और शुद्धिकरण (आग के द्वारा) शामिल था।

ग. पवित्र आत्मा पाना।

१) यूहन्ना १४:१७, २० - पवित्र आत्मा हम में वास करता है इसलिए ही यीशु हम में वास करते हैं।

२) लूका ११:११-१३ - हम एक कहानी को देखते हैं जिसमें एक पुत्र अपने पिता से उपहार मांगता है।

क) तुलनात्मक दृष्टिकोण से देखने पर, हम कहेंगे कि एक पुत्र ने (एक जन जो पहले से ही मसीही है) अपने पिता से (परमेश्वर से) एक वरदान मांगा (पवित्र आत्मा)।

ख) बहुत से मसीही जन विश्वास करते हैं यह अनुच्छेद "दूसरे अनुभव" के बारे में बात करता है जिसमें मसीही लोग पवित्र आत्मा का बपतिस्ता प्राप्त करते हैं।

३) लूका २:३४- चाहे मामला जो भी हो, यह बात तो मानने योग्य है कि भरने से पहले खाली होना बहुत ज़रूरी है (मत्ती ५:३ के सिद्धांत को देखें)।

घ. पवित्र आत्मा की अगुवाई।

१) मत्ती ४:१ - पवित्र आत्मा हमारी अगुवाई सदैव ऐसी चीज़ों में नहीं करता जिन्हें संसार "अच्छा" कहता है। वह हमें परीक्षाओं और कष्टों में भी डाल सकता है।

२) लूका ९:१४ - पवित्र आत्मा की अगुवाई और सुव्यवस्था एक साथ चलती है।

३) लूका ५:३९ - यह सिद्धान्त हमें धर्मनिष्ठा और अप्रासंगिकता की ओर लेकर जाता है। इसका अर्थ उस अयोग्यता से है जिसके तहत आत्मा के पुराने कार्यों या बहाव को छोड़कर नये बहाव, नये कार्यों, नये प्रकाशनों को धारण किया जाता है। कलीसियाओं में धर्मनिष्ठा और अप्रासंगिकता का परिणाम पवित्र आत्मा को नये तरीके से काम करने का मौका नहीं मिलता।

टिप्पणियाँ —

e. पवित्र आत्मा की सेवकाई।

१) यूहन्ना १५:२६ - पवित्र आत्मा यीशु की गवाही देता है।

२) यूहन्ना १६:१४ - पवित्र आत्मा यीशु की महिमा करता है।

३) लूका १२:११, १२ - पवित्र आत्मा आवश्यकता पढ़ने पर तुरन्त शिक्षा दे सकता है।

४) मरकुस १३:११ - जब हम पर यीशु मसीह के नाम के कारण दोष लगाए जाएंगे, तब पवित्र आत्मा हमारी ओर से बचाव करेगा।

५) यूहन्ना १८:५, ६ - पवित्र आत्मा के शक्ति के कारण बहुत से लोगों के बारे में गवाही दी गयी है कि वे "आत्मा में बेसुध" हो गये थे। सम्भवतः इस अनुच्छेद में यही सब हुआ (इसके अलावा हम यह भी मान सकते हैं प्रेरितों ९:४ में भी कुछ ऐसा ही हुआ होगा)।

ग. विषय #३: आलौकिकता।

१. शीर्षक #१: सृष्टि।

क. यूहन्ना १:३,१० सारी चीजें वचन और ज्योति के द्वारा सृजी गयी थीं।

ख. अर्थात, सारी चीज़ें यीशु के द्वारा आलौकिक ढंग से सृजी गयी थीं।

२. शीर्षक #२: परमेश्वर की सामर्थ्य।

क. लूका १०:२० - हमें इस बात को याद रखना चाहिए कि हमारा आनन्द परमेश्वर की सामर्थ्य से आलौकिक चिन्ह और चमत्कार प्राप्त करने पर आधारित नहीं है, वरन उद्धार के निमित्त पायी जाने वाली परमेश्वर की सामर्थ्य पर आधारित है।

ख. यूहन्ना ९:३ - बीमारियों को चंगा करने के लिए परमेश्वर की सामर्थ्य का इस्तेमाल परमेश्वर की महिमा के लिए किया जा सकता है।

ग. लूका ४:३६ - दुष्ट आत्मा को निकालने के लिए दो चीज़ों की आवश्यकता होती हैः शक्ति और अधिकार।

घ. लूका ५:१७ - चंगा करने के लिए परमेश्वर की सामर्थ्य का उपस्थित होना बहुत ज़रूरी है। इस वचन का अभिप्राय यह है कि कई जगहों पर परमेश्वर की उपस्थिति मौजूद नहीं होती। वह सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर हैं।

टिप्पणियाँ –

ङ. लूका ८:४६ - जब परमेश्वर आपको अपनी शक्ति के द्वारा सेवा निभाने के लिए इस्तेमाल करते हैं उसमें शारीरिक अनुभूतियां शामिल **हो सकती हैं** (हालांकि ऐसा होना ज़रूरी नहीं है और हम कह सकते हैं कि यह तो सामान्य सी बात है)।

च. यूहन्ना १८:५, ६ - पवित्र आत्मा की शक्ति के कारण बहुत से लोगों के बारे में गवाही दी गयी है कि वे "आत्मा में बेसुध" हो गये थे। सम्भवतः इस अनुच्छेद में यही सब हुआ (इसके अलावा हम यह भी मान सकते हैं प्रेरितों ९:४ में भी कुछ ऐसा ही हुआ होगा)।

छ. लूका ८:३५-३७ - जो लोग यीशु को नहीं जानते हैं उनके लिए परमेश्वर की सामर्थ्य का प्रगटीकरण बहुत डरावना हो सकता है। वह इतना डरावना हो सकता है कि वे शायद इसका भाग होना न चाहें।

३. शीर्षक #३: चंगाई।

क. लूका १०:२० - हमें इस बात को याद रखना चाहिए कि हमारा आनन्द परमेश्वर की सामर्थ्य से आलौकिक चिन्ह और चमत्कार प्राप्त करने पर आधारित नहीं है, वरन उद्धार के निमित्त पायी जाने वाली परमेश्वर की सामर्थ्य पर आधारित है।

ख. लूका १८:२४-२७ - एक धनी व्यक्ति का परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करना बहुत कठिन, और यह बात सभी पर लागू होती है, लेकिन यीशु मसीह एक दृष्टान्त के द्वारा यह समझाने की कोशिश करते हैं कि यह कितना मुश्किल काम है। इस बात पर ध्यान दें कि चेलों ने जब इस विषय पर बातें कीं उन्होंने अपने आप को शामिल करते हुए कहा कि एक चमत्कार के बिना उद्धार पाना असम्भव है।

ग. यूहन्ना १४:१२ - यीशु पर विश्वास करने वाले लोग उससे भी बढ़कर कार्य करेगें। यहां पर यीशु ने इस बात की घोषणा कर दी कि उसकी सामर्थ्य और प्रभुता युगों युगों तक उसके लोगों में प्रगट होती रहेगी।

घ. मरकुस ५:३४ और ६:५,६- चमत्कार सीधे तौर पर विश्वास का परिणाम हो सकता है। चमत्कारों की घटी का कारण सीधे तौर पर विश्वास में कमी हो सकती है (मरकुस १०:५२; लूका १७:१९; १८:४२ को भी देखें)।

ङ. मत्ती १३:५८- अविश्वास, चमत्कारों के बीच में बाधा बन सकता है।

च. मरकुस ६:५१,५२ - कई बार लोगों का हृदय चमत्कारों को लेकर कठोर हो जाता है क्योंकि उनके होने पर दूसरों को कष्ट उठाना पड़ता है (भोजन में आशीष देकर उसे गुणन करने के चमत्कार तब हुआ था जब चेले लोगों को भोजन देने की बजाय खुद अपने आराम को लेकर चिन्तित थे)।

टिप्पणियाँ —

४. शीर्षक #४: चंगाई।

क. बीमारियों के कारण।

१) यूहन्ना ५:१४ - बीमारियां पाप की वजह से हो सकती हैं।

२) यूहन्ना ९:३ - बीमारियों का इस्तेमाल परमेश्वर की सामर्थ्य द्वारा चंगाई प्रदान करके परमेश्वर की महिमा के लिए किया जा सकता है।

ख. चंगाई का उद्देश्य।

१) यूहन्ना ९:३ - चंगाई से परमेश्वर की महिमा होती है।

२) यूहन्ना ११:४ - एक बार फिर से हम देखते हैं कि चंगाई परमेश्वर की महिमा के लिए होती है।

३) मत्ती ९:६ प्रभु यीशु द्वारा पाप क्षमा करने के अधिकार को प्रकट करने के लिए भी चंगाई प्रदान की जा सकती है।

४) लूका ७:८ - चंगाई राजदूतों के द्वारा की गयी। यहां तक कि यीशु ने भी वही किया जिसे हम "राजदूतों की चंगाई" कह सकते हैं (उसने यह कार्य उस पिता के अधिकार से किया था जिसने उसे भेजा था)।

क) अब यीशु हमें अपने अधिकार के साथ दूसरों को चंगा करने के लिए भेजते हैं। जो कि वह चंगाई है जिसें परमेश्वर की सामर्थ्य में होकर उसके चुने हुए पात्रों या प्रतिनिधियों के द्वारा किया जाता है।

ख) अतः, चंगाई को सुसमाचार की प्रमाणिकता को साबित करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है (मरकुस १६:१८)।

ग. चंगाई निम्नलिखित बातों का परिणाम हैः

१) मत्ती १४:१४ - चंगाई के पीछे अधिकतर तरस जुड़ा।

२) लूका ७:१३ - कुछ विशेष घटनाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि चंगाई तरस का परिणाम होता है (मरकुस १:४१; यूहन्ना ११:३५; मत्ती २०:३४)।

३) मत्ती ९:२२ - चंगाई और विश्वास आपस में एक दूसरे के साथ जुड़े होते हैं। चंगाई विश्वास का परिणाम है।

s

टिप्पणियाँ —

४) मरकुस ५:३४ और ६:५, ६ चमत्कार, विश्वास का परिणाम हो सकता है। चमत्कारों में अभाव विश्वास में अभाव का परिणाम हो सकता था। (मरकुस १०:५२; लूका १७:१९; १८:४२ को भी देखें)।

५) लूका ५:१७ - अन्त में, परमेश्वर चंगाई पर अधिकारी हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि, चंगाई, चंगा करने के लिए उपस्थित परमेश्वर की सामर्थ्य का परिणाम होती है।

घ. चंगाई की सेवकाई।

१) मत्ती ९:२८,२९ - यीशु ने सिखाया कि चंगाई प्राप्त करने के लिए विश्वास होना अनिवार्य है। इसीलिए उसने चंगाई प्राप्त करने वाले व्यक्ति के विश्वास के लिए प्रार्थना की। दूसरों के लिए प्रार्थना करते समय, प्रार्थना करवाने वाले को विश्वास करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए और चंगाई प्राप्त करने वाले की चंगाई को स्वयं उसके विश्वास से जोड़ देना चाहिए।

२) लूका १८:४१,४२- यीशु ने लोगों को स्पष्ट तौर पर बताने के लिए उत्साहित किया कि उन्हें वास्तव में क्या चाहिए। उसने उन्हें प्रतिउत्तर दिया जिनमें विश्वास था।

३) यूहन्ना ५:६ - यीशु ने व्यक्ति को इस बात पर विचार करने के लिए प्रोत्साहित किया कि उसे क्या चाहिए। यह प्रत्यक्ष नज़र आता था कि उस व्यक्ति को किस बात की आवश्यकता है लेकिन फिर भी यीशु उससे अपनी इच्छा को स्पष्ट तौर पर बोलने के लिए कहते थे। चंगाई की सेवकाई का यह एक महत्वपूर्ण भाग है।

४) मरकुस १६:१७, १८ - चंगाई विश्वासियों की पहचान से जुड़े चिन्हों में से एक है।

५) लूका ७:८ - चंगाई राजदूतों के द्वारा की गयी। यहां तक कि यीशु ने भी वही किया जिसे हम "राजदूतों की चंगाई" कह सकते हैं (उन्होंने यह कार्य उस पिता के अधिकार से किया था जिन्होंने उन्हें भेजा था)।

क) अब यीशु हमें अपने अधिकार के साथ दूसरों को चंगा करने के लिए भेजते हैं। जो कि वह चंगाई है जिसे परमेश्वर की सामर्थ्य में होकर उसके चुने हुए पात्रों या प्रतिनिधियों के द्वारा किया जाता है।

ख) अतः, चंगाई को सुसमाचार की प्रमाणिकता को साबित करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है (मरकुस १६:१८)।

टिप्पणियाँ —

III. परमेश्वर की विशेषताएं।

क. **विषय #१: परमेश्वर का प्रेम।**

१. शीर्षक #१: प्रेम।

क. प्रेम की सर्वोच्चता (देखें मत्ती २२:३७-३९)। प्रेम दो महानतम आज्ञाओं को केन्द्र बिन्दु है।

ख. हमारे लिए परमेश्वर का प्रेम।

१) लूका ११:११-१३ एक सांसारिक पिता अपने पुत्र से प्रेम करता है, और वह अपने पुत्र की मांग को पूरा करना चाहता है। हमारे स्वर्गीय पिता हम से कितना अधिक प्रेम करते होंगे?

२) हमारे स्वर्गीय पिता हमें कितना अधिक भली वस्तुओं को देना चाहते होंगे।

ग. परमेश्वर के प्रति हमारा प्रेम।

१) लूका ७:४०-४७- परमेश्वर पिता के लिए आपका प्रेम आपकी इस ज्ञान पर आधारित होता है कि उसने आपके कितने गुनाहों को क्षमा किया है (अर्थात, इस बात का बोध कि आपको किस हद तक उसकी क्षमा की **ज़रूरत** है)।

२) लूका १४:२६- यीशु के प्रति अपने प्रेम को तुल्य बनाने के लिए हमें उन चीज़ों व लोगों को अप्रिय समझना होगा जिन्हें हम प्रिय जानते हैं (इस बिन्दु को मत्ती ६:३३ में लिखें सिद्धान्त के प्रकाश में देखें)।

३) यूहन्ना २१:१५ - यीशु के लिए हमारे प्रेम को प्रभु के लोगों के लिए हमारे जीवन को देने की इच्छा से पहचाना जा सकता है (यूहन्ना १५:१३ को भी देखें)।

घ. दूसरों के प्रति हमारा प्रेम।

१) यूहन्ना २१:१५ - यीशु के लिए हमारे प्रेम को प्रभु के लोगों के लिए हमारे जीवन को देने की इच्छा से पहचाना जा सकता है (यूहन्ना १५:१३ को भी देखें)।

२) यूहन्ना १३:३५ - एक दूसरे के प्रति प्रेम के द्वारा यीशु के चेलों को पहचाना जाता है।

टिप्पणियाँ –

ङ. प्रेम के परिणाम।

१) यूहन्ना १४:१५,२१ - परमेश्वर के प्रति आपके प्रेम का प्रमाण आपकी आज्ञाकारिता है। आज्ञाकारिता परमेश्वर के लिए प्रेम का परिणाम होती है। प्रकाशन, आज्ञाकारिता को परिणाम होता है (और इसी कारण परमेश्वर के प्रति प्रेम का परिणाम भी)।

२) यूहन्ना १३:१ - सेवा प्रेम का परिणाम है। पाँव धोने की रीति का प्रचलन यीशु के चेलों के लिए उसके प्रेम की उदघोषणा के साथ प्रारम्भ हुआ।

३) यूहन्ना ३:१६- देना प्रेम को दर्शाता है। सच्चे प्रेम का परिणाम देना होता है।

च. प्रेम का अभाव (मत्ती २३:३७ को देखें)। लोगों की अनैच्छिकता (कठोरता) परमेश्वर की उनको अपने समीप खीचने की चाह में बाधा डाल सकती है।

२. प्रेम के विषय में केवल एक ही शीर्षक को इस्तेमाल किया गया है।

ख. **विषय #२: परमेश्वर की पवित्रता।** (चरित्र और कार्यों में परमेश्वर की नैतिक श्रेष्ठता)।

१. **शीर्षक #१: न्याय।**

क. परमेश्वर का न्याय मनुष्य के न्याय से बिल्कुल अलग है।

१) लूका १५:२९ - परमेश्वर का न्याय, न्याय के प्रति संसार के दृष्टिकोण से बिल्कुल अलग है (मत्ती २०:१० को देखें)।

२) यूहन्ना ६:४४,६५,६६ – किसी ने ऐसा कहा है, "परमेश्वर का प्रभुत्व, मनुष्य की स्वतन्त्र इच्छा को इतनी शक्तिशाली ढंग से प्रभावित करता है कि, जो कुछ वह स्वीकार या अस्वीकार करता है वह वास्तव में वहीं होता है जो परमेश्वर ने पहले से उसके लिए ठहरा दिया होता है। मनुष्य के लिए यह रहस्य अपनी पूरी समझ से समझना बहुत कठिन है।

क) यह अनुच्छेद हमें यह सिखाते हुए प्रतीत हो रहा है कि मनुष्य का उद्धार केवल तभी हो सकता है परमेश्वर उसे अपनी ओर खींचे, और परमेश्वर किसी को अपने पास खींचते हैं और किसी को नहीं।

ख) अतः, परमेश्वर किसी को अस्वीकार नहीं करते। वह बस कुछ लोगों को अपने पास खींचते नहीं हैं।

टिप्पणियाँ —

ग) अतः, परमेश्वर अस्वीकार नहीं करते वरन चुनते हैं (यह बात रोमियों ९:१४-१८ से मेल खाती है)।

घ) हमें यह भी अच्छी तरह से समझना चाहिए कि मनुष्य स्वयं अपनी स्वतन्त्र इच्छा से परमेश्वर को स्वीकार नहीं करता, लेकिन परमेश्वर किसी को अयोग्य नहीं ठहराते। मनुष्य स्वयं ही अपने आप को अयोग्य ठहराता है। हम कह सकते हैं कि परमेश्वर की अपनी ओर खींचने की शक्ति सभी के लिए उपलब्ध है, लेकिन परमेश्वर कुछ लोगों के उनके अपने कामों की वजह से उन्हें अपने पास नहीं खींचते हैं।

ङ) मनुष्य अपने आप को परमेश्वर के प्रभाव से **अलग** रखता है। उसके अपने कार्य उसके हृदय को कठोर बना देते हैं (यूहन्ना ३:१८; मरकुस ४:११,१२; २पतरस ३:९ को देखें)।

ख. समान अवसर।

१) मत्ती २०:१-१६ - परमेश्वर, अपनी-अपनी, अलग-अलग योग्यताओं के साथ कार्य की शुरूआत करने सभी लोगों को एक ही प्रतिफल देकर समान बना देते हैं। न्याय के प्रति संसार का दृष्टिकोण यह है कि हर एक जन को समान योग्यताओं के साथ में कार्य प्रारम्भ करना चाहिए। संसार परमेश्वर के राज्य के न्याय से सहमत नहीं होता (पद १०-१२ को देखें)।

२) लूका १९:१२-२६- यीशु गिनती से बढ़कर गुणवत्ता पर अधिक ध्यान देते हैं। अर्थात, यीशु हमारा न्याय इस आधार पर नहीं करेगें कि हमारे पास अन्त में क्या बचेगा, लेकिन इस आधार पर कि जो कुछ उसने हमें प्रारम्भ में दिया था उसका (उसके जाने के बाद) हम ने क्या किया। किसी हद तक, आज्ञाकारिता को भण्डारीपन से नापा जा सकता है।

ग. इससे सम्बन्धित अपेक्षाएं।

१) लूका १२:४८- जितनी अधिकार आपको दिया जाएगा, उनती ही ज़िम्मेदारी आपकी होगी। जितने अधिक अवसर आपको प्रदान किये जाएंगे उतनी ही अपेक्षाएं आपसे की जाएंगी।

२) मत्ती २५:१५ - परमेश्वर का न्याय योग्यताओं के हिसाब से फल या उत्पादन की मांग करता है। यदि आपके पास "पांच तोड़े" हैं, तो आपसे उस व्यक्ति की तुलना में अधिक अपेक्षा की जाएगी जिसके पास केवल "एक" तोड़ा है।

घ. सामाजिक न्याय (लूका ३:१०-१४ को देखें)। पश्चाताप में तरस और उदारता (पद ११), दूसरों के प्रति ईमानदारी (पद १३) और न्याय (पद १४) निहित होते हैं। ये सारी चीज़ें भौतिक वस्तुओं में रूची में कमी और सामाजिक न्याय की चाह में अधिक ध्यान केन्द्रित करता है।

टिप्पणियाँ —

ङ. किसी भी कीमत पर न्याय?

१) लूका ६:३० दूसरों के प्रति निःस्वार्थी होना उससे उच्च सिद्धान्त को दर्शाता जिसे हम "उचित" कहते हैं।

२) १ कुरि. ६:७,८- हम यहां इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि हम किसी भी कीमत पर "न्याय" की मांग नहीं कर सकते हैं।

च. न्याय पाने के तरीके (लूका १८:७,८)। निरन्तर प्रार्थना करने से हमारा न्याय चुकाया जाता है। परमेश्वर निरन्तर की जाने वाली प्रार्थनाओं को सुनते हैं, इसलिए चाहे आपको अन्याय की जीत होती भी नज़र आए जब भी प्रार्थना करना बन्द न करें।

छ. अन्तिम न्यायः क्योंकि अन्त में सब कुछ खोला जाएगा।

१) मत्ती १०:२६- सारी चीज़ें खोली जाएंगी। कुछ भी छिपा नहीं रहेगा।

२) लूका १२:२ - हो सकता है कि कपटी लोग वर्तमान में दूसरों को धोखा दे दें, लेकिन उनका कपट अन्त में सबसे सामने खुल जाएगा। अन्त में जो कुछ बचेगा वह सब कुछ खोल दिया जाएगा। अतः, परमेश्वर का "अन्तिम न्याय" धर्मियों को बहुत शान्ति प्रदान करेगा और कई बार वैसा ही महसूस करते हैं जैसा हबक्कूक महसूस करता था (देखें हबक्कूक १:१-४,१२-१४)।

२. शीर्षक #२: न्याय।

क. न्यायी।

१) यूहन्ना ५:२२,२७ - यीशु सारे प्राणियों का न्याय करेंगे।

२) लूका १२:४९, ५० - क्रूस आग में एक सुलगती हुई लकड़ी के समान है। यह आने वाले न्याय की तैयारी करती है। लेकिन यीशु अपने दूसरे आगमन पर ही न्यायी के रूप में आएगें (यूहन्ना ३:१७-२०)।

३) लूका १०:११-१४ - न्याय का दिन "उस दिन" को (पद १२) दर्शाता है, जो परमेश्वर के राज्य के परिपूर्णता में आने का दिन है (पद ११)। परमेश्वर का राज्य अभी तक अपनी परिपूर्णता में नहीं आया है, लेकिन वह अपनी परिपूर्णता में उस दिन आयेगा जब न्यायी और उसका न्याय यहां उतरेगा।

टिप्पणियाँ —

ख. न्याय करने का कारण।

१) लूका १९:१२-२६ - न्याय का ताल्लुक गिनती से अधिक गुणवत्ता से होता है। अर्थात, परमेश्वर हमारा न्याय इस आधार पर नहीं करेंगे कि अन्त में हमारे पास कितना बचने वाला है, वरन इस आधार पर कि जो कुछ उसने हमें प्रारम्भ में दिया उसका हम ने क्या किया (जबकि वह जाता रहा)। कई मायनों में आज्ञाकारिता को भण्डारीपन से जोड़कर देखा जाता है।

२) मरकुस १६:१६ - अविश्वास का परिणाम दण्ड होता है।

३) यूहन्ना ३:१८ - यीशु मसीह में विश्वास की घटी का परिणाम दण्ड होता है।

४) यूहन्ना ३:३६ - अविश्वास और अनाज्ञाकारिता का परिणाम परमेश्वर की ओर से क्रोध होता है।

५) लूका १९:२०-२६ - कई लोगों को असफल होने से डर लगता है (जो कि अपने आप में एक प्रकार का घमण्ड होता है)। जिसकी वजह से वे यीशु द्वारा दी गयी चीज़ों का इस्तेमाल नहीं करते हैं। उनको उसका नुकसान उठाना पड़ेगा (न्याय)।

६) लूका १३:६-९ - परमेश्वर हमें फलदायी होने के लिए कुछ निश्चित समय (अनुग्रह) देते हैं। यदि हम लगातार निकम्मे बने रहते हैं, तो एक न एक दिन हमें काट (दण्डित) किया जाएगा।

७) मत्ती १२:३६ - हमारी बातें निरर्थक नहीं होती! उनका मूल्य बहुत बड़ा हो सकता है। जी हां, उनकी वजह से हमें दण्डित होना पड़ सकता है।

८) मरकुस ९:४२ - जो कोई इन "छोटे से छोटों को" ठोकर खिलाता है उसी भारी दाम (न्याय) चुकाना होगा।

ग. न्याय के स्तर।

१) लूका २०:४७ - अलग अलग तरह और स्तर के दण्ड होते हैं।

२) मरकुस १२:४० - कपटियों के प्रति यीशु की प्रतिक्रियाएं, व्यवहार और उनकी बातें ऐसा संकेत करती हैं कि उन्हें बहुत कष्टदायक न्याय का सामना करना पड़ेगा।

टिप्पणियाँ —

घ. वर्तमान न्याय।

१) मत्ती २१:४३ - जो लोग परमेश्वर के गवाह या प्रतिनिधी के रूप में नहीं खड़े होना चाहते उनसे परमेश्वर के द्वारा दी गयी सारी चीज़ें छीन ली जाएंगी। वे उनसे लेकर दूसरों को दे दी जाएंगी। इस तरीके से वर्तमान में हमारा भी न्याय हो सकता है।

२) लूका ६:३७, ३८ - बाइबल हम से कहती है कि जो हम चाहते हैं कि दूसरे हमारे लिए करें वही काम हमें दूसरों के लिए करना चाहिए। बाइबल हम से यह भी कहती है कि जैसा हम दूसरों के साथ करते हैं वैसा ही हमारे साथ किया जाएगा। हम जो कुछ बोते हैं वहीं काटते हैं। दूसरे शब्दों में, जिस प्रकार से हम दूसरों पर दोष लगाते हैं ठीक उसी प्रकार से हमारे ऊपर भी दोष लगाया जाएगा। हम ऐसा करके स्वयं दोषी ठहरते हैं।

ङ. दूसरों पर दोष लगाना।

१) यूहन्ना ८:७ - हमें दूसरों पर दोष इसलिए भी नहीं लगाना चाहिए क्योंकि हमारे अपने जीवनों में पाप पाया जाता है।

२) लूका ६:४२ - दूसरे की गलतियां दूर करने का विचार करने से पहले हमें अपने जीवन से गलतियों को दूर करना चाहिए। तब आप उन पर दोष लगाने की बजाय उनकी मदद करेंगे।

३) लूका ६:४३, ४४ - हर एक वृक्ष अपनी किस्म के हिसाब से फल लाता है। मनुष्य भी ठीक ऐसा ही है। जिस प्रकार के इन्सान वे होते हैं उसी प्रकार का फल उनके जीवन में से आता है। अतः हम लोगों को परख सकते या उनका मूल्यांकन कर सकते हैं लेकिन हम उन्हें दण्डित करने के भाव से दोष नहीं लगा सकते।

च. धार्मिक क्रोध।

१) यूहन्ना २:१४-१६ - यीशु का धार्मिक क्रोध उन लोगों के विरूद्ध भड़का जो अपने लाभ और इच्छा पूर्ति के लिए परमेश्वर के मन्दिर का इस्तेमाल कर रहे थे। वर्तमान में मसीही लोग परमेश्वर का मन्दिर हैं।

२) (१ कुरिन्थियों ३:१६) - परमेश्वर का क्रोध हम पर भी भड़क सकता है यदि हम अपने जीवनों को (मन्दिरों) को अपनी इच्छा पूर्ति व अपने फायदे के लिए इस्तेमाल करते हैं।

ग. टिप्पणियाँ –

विषय #३: परमेश्वर का अनुग्रह। (अयोग्य लोगों का नियमित तौर पर पक्ष लिया जाना)।

१. शीर्षक #१: सामान्य अनुग्रह।

क. लूका ६:३५ - परमेश्वर कृतघ्न और बुरे लोगों पर भी कृपालु हैं।

ख. मत्ती ५:४५ - परमेश्वर सभी मनुष्यों पर दया करते हैं (रोमियों २:४ और प्रेरितों १७:२६, २७ को भी पढ़ें)।

२. शीर्षक #२: दया।

क. परमेश्वर की दया महान है। उसे आपको आशीषित करने के लिए आपसे किसी बड़े प्रतिउत्तर की आवश्यकता नहीं है। जैसा कि सदोम में हुआ था, उसके लिए एक "टिपटिमाती बत्ती" ही काफी है। वह उसे कभी तुच्छ नहीं जानेगा। उसी अपरम्पार कृपा छोटी से छोटी प्रतिक्रिया का उत्तर देती है।

ख. लूका १३:६-८ - परमेश्वर अपनी कृपा के चलते ही हमें लेकर धीरज धरते हैं। लेकिन, परमेश्वर की दया की भी एक सीमा है।

३. शीर्षक #३: तरस।

क. मत्ती १२:७ - व्यवस्था के पूरा होने का पक्ष उसके बलिदान में नहीं वरन उसके तरस में पूरा होता है।

ख. मरकुस २:१७ और मत्ती ९:१३ – परमेश्वर के प्रति सही प्रतिउत्तर दूसरों पर तरस खाना है। तरस एक ऐसे जन की प्रतिक्रिया है जो स्वयं और दूसरों को बीमार (पापी) के रूप में देखता है। बलिदान प्रायः एक ऐसे जन का दृष्टिकोण है जो स्वयं व दूसरे को स्वस्थ्य (धर्मी) के रूप में देखता है।

ग. लूका ३:१०,११ - पश्चाताप करना उदारता और तरस है।

घ. मत्ती १४:१४ - तरस अधिकतर चंगाई से जुड़ा होता है।

ङ. लूका ७:१३ - हम यह भी कह सकते हैं कि चंगाई तरस का परिणाम होता है। (मरकुस १:४१; यूहन्ना ११:३५; मत्ती २०:३४ भी देखें)।

टिप्पणियाँ –

IV. परमेश्वर का सत्य।

क. शीर्षक #१: बाइबल।

१. शीर्षक #१: परमेश्वर का वचन।

क. यह अनन्त है (मरकुस १३:३१ को देखें)। आकाश और पृथ्वी टल जाएंगे, लेकिन उसका वचन कभी न टलेगा।

ख. परमेश्वर का वचन स्वयं परमेश्वर है।

१) यूहन्ना १:१ - वचन परमेश्वर के साथ है और वचन ही परमेश्वर है।

२) यूहन्ना १:१, १४ - वचन परमेश्वर है और उसी ने देहधारण किया है।

३) यूहन्ना १:३, १० - सारी चीज़ें उसी के द्वारा सृजी गयीं। इसका अर्थ है कि सभी चीज़ों को मसीह ने बनाया था।

ग. बाइबल ही परमेश्वर का वचन है।

१) लूका ४:४,८,१२ - बाइबल एक हथियार है। यीशु ने शैतान और उसके प्रलोभनों से लड़ने के लिए परमेश्वर के वचन का इस्तेमाल किया।

२) बाइबल के प्रति हमारा प्रतिउत्तर।

क) यूहन्ना ८:३१ - चेला बनने के लिए आपको बाइबल का पालन करना चाहिए।

ख) यूहन्ना ८:३१.३४ - परमेश्वर के वचनों को मानने का परिणाम सत्य को जानना और सत्य को जानने के परिणाम पाप से आज़ादी होती है।

ग) यूहन्ना ११:३९,४० - विश्वास (धारणा) अक्खड़ नहीं होता है। वह परमेश्वर के वचनों पर आधारित होता है।

टिप्पणियाँ —

३) बाइबल में अनेकता में एकता।

क) मत्ती १:१-१७ और लूका ३:२३-३८ - लूका, गैर मसीही के द्वारा लिखा गया एक मात्र सुसमाचार यीशु की वंशावली को आदम तक लिखता है। मत्ती रचित सुसमाचार जो कि एक यहूदी के द्वारा लिखा गया था, यीशु की वंशावल को अब्राहम से लेकर यीशु तक लिखता है। हर लेखक ने यीशु की वंशावली का उपयोग सेवकाई के किसी एक खास पहलू पर जोर देने के लिए किया था।

ख) मत्ती ४:१-११ और लूका ४:१-१३ - लूका के द्वारा लिखा गया यीशु की परीक्षा का क्रम मत्ती द्वारा लिखे गये परीक्षा के क्रम से अलग है। रूचीकर बात यह है कि, लूका द्वारा दिया गया परीक्षाओं का क्रम १ यूहन्ना २:१६ और उत्पत्ति ३:६ से मेल खाता है। सम्भवतः उसने जानबूझ कर इस क्रम को मानवजाति का "सार्वभौमिक" क्रम बनाने के लिए बदला था।

४) बाइबल यीशु की ओर संकेत करती है।.

क) यूहन्ना ५:३९,४६ - बाइबल हमेशा यीशु की ओर इशारा करती है (यूहन्ना १:४५ को देखें)।

ख) लूका २४:२७,४४ - सारे ही वचनों में यीशु हैं। उत्पत्ति से लेकर मलाकी तक और वहां से प्रकाशितवाक्य तक यीशु को देखा जा सकता है।

२. शीर्षक #२: बाइबल अध्ययन।

क. लूका २४:२७,४४ - यीशु को सम्पूर्ण पुराने नियम में देखा जा सकता है। आपको किस तरह से पुराने नियम को पढ़ना चाहिए? आपको उस समझ के साथ में पढ़ना चाहिए जो यीशु को प्रगट करती है।

ख. यूहन्ना ५:३९,४६ - बाइबल सर्वदा यीशु की ही बातें करती है। हमारे बाइबल अध्ययन का केन्द्र बिन्दु हमेशा यीशु होना चाहिए।

ग. लूका २४:४५ - यीशु ही हमें धर्मशास्त्र को समझने की समझ प्रदान करते हैं। हमें किस तरह से बाइबल का अध्ययन करना चाहिए? हमें यीशु पर यह भरोसा करते हुए बाइबल का अध्ययन करना चाहिए कि वह हमें समझ प्रदान करेंगे।

टिप्पणियाँ —

ख. शीर्षक #२: व्यवस्था।

१. शीर्षक #१: नागरिक कानून।

क. लूका २०:२४-२५ - हमें सरकार के आदेशों के अनुसार कर का भुगतान करना चाहिए, क्योंकि हमें परमेश्वर की आज्ञा का पालन करने के लिए व्यवस्था का पालन करना ज़रूरी है (मरकुस १२:१२ को देखें)।

ख. मत्ती २२:२१ - जो केसर का है वह केसर को दो, और जो कुछ परमेश्वर का है वह परमेश्वर को दो। अगर हम इस बात को समझ जाते हैं कि नागरिकों से जुड़े कानून भी परमेश्वर के द्वारा ही बनाए गये हैं तब हम कानून का पालन करते हुए वास्तव में परमेश्वर की आज्ञा का ही पालन कर रहे होते हैं। इसका अर्थ है कि जो कुछ हमें परमेश्वर की ओर से मिलता है उतना ही अधिकार राज्य सीमित करता है।

२. शीर्षक #२: परमेश्वर की व्यवस्था।

क. यीशु व्यवस्था के प्रभु हैं (मत्ती १२:८)। यीशु सब्त के दिन के परमेश्वर हैं (सब्त व्यवस्था को प्रगट करता है)।

ख. व्यवस्था का सार (मत्ती २२:३७-३९)। व्यवस्था का सार परमेश्वर और दूसरों को प्रेम करना है।

ग. व्यवस्था का हृदय (वास्तविकता, दिखावे के विपरीत है)।

१) मत्ती ५:२२, २८ - परमेश्वर की व्यवस्था पटियाओं पर नहीं,वरन हृदयों पर लिखी हुई है। इसलिए क्रोध करना हत्या करने के बराबर और अभिलाषा, व्यभिचार करने के बराबर हो सकती है।

२) मत्ती १२:७ - व्यवस्था का सार तरस है।

घ. नयी व्यवस्था।

१) लूका ५:३६ - नयी दाखरस को नयी मश्कों में डाला जाता है। इसलिए, नयी वाचा के साथ नये नये तरीके भी साथ में आ रहे हैं (मरकुस २:२१,२२)।

२) यूहन्ना १३:३४ - नयी व्यवस्था यह कहती है कि जिस प्रकार से यीशु ने दूसरों को प्रेम किया वैसे ही हम भी दूसरों को प्रेम करें। व्यवस्था नयी इसलिए है क्योंकि इसमें पहले से उत्तम वाचा पायी जाती है। वह वाचा यह है कि मसीह के द्वारा जाति जातियों के बीच खड़ी हुई दीवार टूट गयी है मसीह का देहधारण हमें यह बताता है कि हमें किस प्रकार प्रेम करना चाहिए। इसलिए हमें सभी लोगों को प्रेम करना चाहिए, और हमारे पास दूसरों को प्रेम करने का इससे भी बेहतर विचार होना चाहिए।

टिप्पणियाँ –

ङ. हमें परमेश्वर की व्यवस्था का पालन करना चाहिए (लूका २०:२४, २५) - जिस तरह से हम परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करते हुए व्यवस्था अर्थात परमेश्वर के वचनों को पालन करते हैं ठीक उसी प्रकार से हमें सरकार की आज्ञाओं को पालने करते हुए कर का भुगतान करना चाहिए (मरकुस १२:१२ को देखें)।

च. व्यवस्था का अभाव (मत्ती २४:१२) को देखें। अधर्म के बढ़ने से बहुत से लोगों को प्रेम ठंडा पड़ जाता है। व्यवस्था के अभाव में विरोध और घृणा उत्पन्न होती है।

छ. व्यवस्था की परिपूर्णता (लूका १६:१७)। व्यवस्था गणना और गुणवत्ता दोनों में सिद्ध है। व्यवस्था का एक बिन्दू भी पूरा हुआ बिना नहीं रहेगा।

३. शीर्षक #३: सब्त।

क. मत्ती १२:८ - यीशु सब्त के प्रभु हैं।

ख. मरकुस २:२२-२८ - मनुष्य को सब्त की सेवा करने की आवश्यकता नहीं है। वरन सब्त ने उसकी सेवा करनी चाहिए क्योंकि सब्त का दिन उसके **लिए** बनाया गया है।

ग. यूहन्ना ५:१७ - यीशु ने बताया कि यदि किसी की **भलाई,** किसी पर **दया या** किसी की **आवश्यकता** को पूरा करने के लिए सब्त के दिन करना पड़े तो किया जा सकता है। अतः प्रेम की सर्वोच्च व्यवस्था सदैव अन्य व्यवस्थाओं से बढ़कर है जिसमें परमेश्वर का चरित्र तथा बाकि सभी व्यव्थाएं निहित हैं।

ग. विषय #३: भविष्यद्वाणी। परमेश्वर के वचनों को बोलना।

१. शीर्षक #१: भविष्यद्वक्ता व भविष्यद्वाणियां।

क. लूका २४:२५,४४ – यीशु के अनुसार, उसके क्रूसीकरण की भविष्यद्वाणी पुराने नियम में कर दी गयी थी।

ख. यूहन्ना १:४१,४५ में – पुराने नियम में ही यीशु मसीह के आने का अनुमान लगाया जा चुका था।

ग. मत्ती १३:५७ – एक भविष्यद्वक्ता अपने गाँव और अपने घर को छोड़ अन्य सभी जगह पर आदर पाता है। (मरकुस ६:४ को देखें)।

घ. लूका ४:२४-२७ – भविष्यसूचक सेवकाई जाति जाति के लोगों के लिए होती है, इसलिए उसे अपने शहर या गांव में आदर नहीं मिलता।

टिप्पणियाँ —

२. शीर्षक #२: झूठे भविष्यद्वक्ता।

क. मत्ती ७:१५-२० - झूठे भविष्यद्वक्ता अपने आपको परमेश्वर के लोगों में से एक दिखाने का प्रयास करते हैं। वे अपने फलों या अपने व्यवहार के द्वारा पहिचाने जा सकते हैं।

ख. मत्ती २४:४-८ – जैसे-जैसे अन्त का समय नज़दीक आ रहा है, हमें झूठे भविष्यद्वक्ताओं से सावधान रहना है।

घ. विषय #४: आत्मिक नियम। (अनदेखा, वास्तविक भूमण्डल और सृष्टि का क्रम)।

१. शीर्षक #१: जीवन की नींव।

क. मत्ती २७:४६ - यीशु ने उस दूरी को महसूस किया है जो पाप के वजह से पैदा होती है। जब हम पाप करते हैं तब हम अपने आप को परमेश्वर से दूर कर लेते हैं (रोमियों ६:२३)।

ख. मत्ती ७:२६-२७ - परमेश्वर के वचनों को न मानने की वजह से नींव कमज़ोर हो जाती है, जिससे कमज़ोर मसीही उत्पन्न हो सकते हैं। यह एक आत्मिक सिद्धान्त है। आज्ञाकारिता परमेश्वर की ओर लेकर जाती है। लेकन पाप का परिणाम अन्य चीज़ें और विशेष तौर पर मृत्यु होता है (याकूब १:१५)।

२. शीर्षक #२: नियमितता।

क. लूका ६:४५- हमारी बातों से ही यह प्रगट होता है कि हमारे हृदय (चरित्र, इच्छा, भावनाओं इत्यादि) में क्या है। हमारी बातों और हमारी पहिचान में एक गहरा सम्बन्ध है।

ख. लूका ६:४३,४४- एक वृक्ष अपनी ही किस्म का फल देता है। उसी प्रकार, एक अच्छे व्यक्ति का फल अच्छी बातें और एक दुष्ट का फल दुष्ट बातें होती हैं। फल का सिद्धान्त, नियमितता के आत्मिक सिद्धान्तों में से एक है।

ग. लूका १२:४८- जितना **अधिकार** आपको दिया जाएगा, उतनी ही **जिम्मेदारियां** आपके पास होगी। जितने अवसर आपके पास होगें, उतनी ही अपेक्षा भी आप से की जाएगी। यह सिद्धान्त भी, नियमितता के आत्मिक सिद्धान्तों में से एक है।

टिप्पणियाँ —

३. शीर्षक #३: जो आप बोते हैं वही काटते हैं।

क. मत्ती ५:४- यह एक स्पष्ट आत्मिक सिद्धान्त है कि जो आप बोते हैं वही आप काटते भी हैं।

ख. मत्ती ७:१८- "आप जैसे हैं वैसा ही आपका फल होगा' भी यह कहने का दूसरा तरीका है कि जो आप बोते हैं वही आप काटेगें।

ग. मत्ती ७:२- किसी हद तक हम ही निर्धारित करते हैं कि दूसरे हमारे बारे में क्या कहने वाले हैं (बोने और काटने के सिद्धान्त के कारण)।

घ. लूका ६:३७,३८ - बाइबल कहती है कि जो हम दूसरों से चाहते हो कि वह हमारे लिए करें हम भी उनके साथ वैसा ही किया करें। बाइबल हम से यह भी कहती है कि जैसा तुम दूसरों के साथ करते हो वैसा ही तुम्हारे साथ भी किया जाएगा। हम जो बोते हैं वही काटते हैं। दूसरे शब्दों में, दूसरों पर जिस तरह से हम दोष लगाते हैं यह निर्धारित करेगा कि वे हम पर कैसे दोष लगाएगें।

ङ. मत्ती २६:५२- जितने लोग लड़ाई में जाते हैं,लड़ते हैं और तलवार चलाते हैं वे लड़ाई में तलवार से ही मारे जाएगे। यह बात भी बोने और काटने वाले सिद्धान्त के साथ ठीक साबित होती है।

४. शीर्षक #४: ज्योति और अन्धकार।

क. यूहन्ना ३:२० - ज्योति अंधकार का पर्दाफाश कर देती है। अंधकार कभी भी अपनी गुप्त बातों को प्रगट होते हुए नहीं देखना चाहता इसलिए वह ज्योति से बचकर दूर भागता है। यह एक आत्मिक सिद्धान्त है कि ज्योति और अन्धकार एक दूसरे के विपरीत हैं।

५. शीर्षक #५: उपद्रव।

क. लूका ९:५६ - जहां पर यीशु के नाम और प्रतिष्ठा की घोषणा की जाती है वहां पर उपद्रव का कोई स्थान नहीं होता। यह ऐसा सिद्धान्त है जो आज भी उस तरीके की लड़ाईयों का विरोध करता है जो सैंकड़ों वर्ष पहले हुआ करते थे।

ख. यह एक ऐसा सिद्धान्त है जो "पवित्र लड़ाई" और उपद्रव के साथ सरकारी नियमों का उल्लंघन करने पर कठिन चर्चा की ओर ले जाता है।

टिप्पणियाँ —

ङ. **विषय #५: प्रबोधन** (परमेश्वर, संसार और अपने आप की अधिक समझ)।

१. शीर्षक #१: भेद।

क. यूहन्ना ३:८ - नया जन्म भेद है। हम उसका आदि और अन्त कुछ नहीं समझ सकते।

ख. यूहन्ना ३:१३ - देहधारण का भेद नये जन्म के भेद के समा नही है। यीशु **स्वर्ग से उतरे।** हम लोगों का **जन्म स्वर्ग से हुआ है।**

ग. मत्ती १३:११ - परमेश्वर के भेदों को जानने का अधिकार कुछ लोगों को दिया गया है लेकिन दूसरों को नहीं।

घ. मरकुस ४:११ - जिन लोगों को ये भेद प्रगट करने के अधिकार दिये गये हैं ये यीशु से "जुडे" लोग हैं। अर्थात, वे लोग जो उसका अनुसरण करते हैं और उसके साथ सम्बन्ध बनाये रखते हैं और प्रकाशन पाते हैं।

२. शीर्षक #२: प्रकाशन।

क. लूका ९:४५ – प्रकाशनों पर परमेश्वर का अधिकार होता है।

ख. मरकुस ४:११ - जिन लोगों को ये भेद प्रगट करने के अधिकार दिये गये हैं ये यीशु से "जुडे" लोग हैं। अर्थात, वे लोग जो उसका अनुसरण करते हैं और उसके साथ सम्बन्ध बनाये रखते हैं और प्रकाशन पाते हैं। जी हां,ज्ञान और प्रकाशन यीशु के साथ समय बिताने से मिलता है।

ग. यूहन्ना २०:१६ – यीशु के साथ हमारे व्यक्तिगत रिश्ते के आधार पर ही हमें उससे प्रकाशन मिलता है। यीशु हमें नाम लेकर बुलाते और हमारे साथ सम्बन्ध के आधार पर हमारे हृदय को बदल देते हैं। जिसका परिणाम प्रकाशन होता है।

घ. यूहन्ना ७:१७ – आज्ञाकारिता को प्रकाशन का पूर्वज्ञान व समझ होती है।

टिप्पणियाँ –

ङ. यूहन्ना १४:२१ – प्रदीप्ति भी आज्ञाकारिता से जुड़ी होती है (जिसका सम्बन्ध प्रेमी परमेश्वर से होता है)।

१) परमेश्वर हम पर अपने प्रेम को प्रगट करते हैं (यह प्रक्रिया हमें लेकर परमेश्वर के उस प्रेम से प्रारम्भ होती है और यूहन्ना ७:१७ में देखे गये सिद्धान्त से मेल खाती है)।

२) फिर हम प्रेम करने के योग्य हैं (जो १यूहन्ना ४:१९ में पाये जाने वाले सिद्धान्त के साथ मेल खाता है)।

३) परमेश्वर को प्रेम करने का परिणाम उसकी आज्ञाओं को मानना है (जो यूहन्ना १४:१५ में पाये जाने वाले सिद्धान्त से मेल खाता है।

४) अन्त में, परमेश्वर की आज्ञा मानने से अधिक प्रकाशन मिलता है (यूहन्ना १४:२१) और यह प्रक्रिया एक बार फिर से प्रारम्भ हो जाती है।

च. लूका २४:५४ – यीशु स्वयं पवित्र शास्त्र को समझाने के लिए हमारे दिमागों और समझ को खोलते हैं। वही भेदों और प्रकाशनों को प्रगट करने वाले स्रोत हैं।

छ. लूका १०:२२ – केवल पुत्र ही पिता को प्रगट कर सकता है।

ज. मरकुस २९:३३ – जब कभी ताज़ा प्रकाशन दिया जाता है, तो उसके साथ साथ प्रकाशन को ठीक ठंग से न समझ पाने की वजह से गलतफहमियां भी आती हैं। इसलिए, प्रकाशन को अति सावधानी तथा परमेश्वर का आदर करते हुए स्वीकार किया जाना चाहिए।

३. शीर्षक #३: बुद्धि और समझ।

क. बुद्धि को निम्न बातों में देखा जा सकता हैः

१) मत्ती ११:१९ – बुद्धि अपने कामों से प्रमाणित(घोषित,साबित) होती है। इसका अर्थ है कि हमारे कार्य इस बात को प्रमाणित करते हैं कि परमेश्वर की बुद्धि हम में है। बुद्धि के परिणाम स्वरूप विचार से कहीं अधिक कार्य प्रगट होते है (हालांकि बुद्धि की प्रचलित परिभाषा बिल्कुल इसके विपरीत है)।

२) लूका ७:३५ – बुद्धि अपने फलों और परिणामों के द्वारा प्रगट (नज़र आती या दिखती है) होती है।

३) यूहन्ना ७:१७ – परमेश्वर की इच्छा को पूरा करने के चाह में बुद्धि प्रगट होती है।

टिप्पणियाँ –

ख. बुद्धि और समझ निम्न बातों का परिणाम होते हैंः

१) लूका २४:४५ – सर्वप्रथम, हमें यह बात फिर से याद रखनी है कि बुद्धि को स्रोत यीशु है। क्योंकि वह ही पवित्र शास्त को समझने के लिए हमारे मनों को खोलते हैं।

२) यूहन्ना ८:३१-३४ – वचनों को मानने का परिणाम सत्य की पहिचान होती है और सत्य की पहिचान का परिणाम पाप से आज़ादी। यह सारी कहानी आज्ञापालन से प्रारम्भ होती है।

३) मरकुस ४:११ – जिन लोगों को ये भेद प्रगट करने के अधिकार दिये गये हैं ये यीशु से "जुड़े" लोग हैं। अर्थात, वे लोग जो उसका अनुसरण करते हैं और उसके साथ सम्बन्ध बनाये रखते हैं और प्रकाशन पाते हैं।

४) मत्ती १३:१२ – जिन लोगों के पास सुनने वाले कान हैं वे समझ को प्राप्त करेंगे। लेकिन जो सुनना नहीं चाहते हैं (उनके बारे में पद १४,१५ में लिखा गया है वे सम्भवतः पाप के प्रभाव से उदासीन या कठोर हृदय के लोग है) उनके पास समझ का अभाव रहेगा। याद रखें, कि जिसके पास सुनने के कान हैं यीशु के साथ सम्बन्ध को ध्यान में रखकर लिखा गया है।

५) मत्ती ७:२४ – बुद्धि के सन्दर्भ में बात करें तो इसमें सुनना और करना **दोनों** ही आवश्यक पहलू हैं।

ग. बुद्धि और समझ का इस्तेमाल करना।

१) यूहन्ना ८:३१-३४ – परमेश्वर के वचन को मानने का परिणाम सत्य की पहिचान और सत्य की पहिचान का परिणाम पाप से आज़ादी होता है। यह सिलसिला आज्ञाकारिता के साथ प्रारम्भ होता है। यह पवित्रीकरण के साथ समाप्त होता है। बुद्धि और समझ का इस्तेमाल हमें पवित्र करने के लिए किया जाता है।

२) लूका २०:१-८ – यीशु किसी भी वार्ता या परिस्थिति को कपटियों के नियन्त्रण में नहीं जाने देते। वह अपना कब्ज़ा बनाये रखने और उनके कपट को प्रगट करने के लिए श्रेष्ठ बुद्धि का इस्तेमाल करते हैं।

३) लूका २१:१०-१५ – जब आपको यीशु मसीह के खातिर अधिकारियों के सामने ले जाया जाए तब अपने आप का बचाव करने का प्रयास न करना। वरन समय से पहले उस अवसर पर यीशु की गवाही देने के तैयारी करें और वह आपको अपने विरोधियों का मुँह बन्द करने की बुद्धि प्रदान करेगा।

यीशु की शिक्षाएँ I

टिप्पणियाँ –

पाठ्यक्रम का निष्कर्ष:

याद रखें कि इस पाठयक्रय को नये नियम की सुसमाचार की पुस्तकों में से एक "परमेश्वर" नामक विषय पर यीशु की शिक्षाओं को लेकर सर्वेक्षण करने के लिए तैयार किया गया है। शीर्षकों में से हर एक शीर्षक एक विशाल और गहन अध्ययन के योग्य है। हम आपको प्रोत्साहित करते हैं कि आप इस संसाधन का उपयोग अपनी शिक्षा की सेवकाई में कर सकते हैं।